॥ श्रीः ॥

दोहावली ॥

35328

जिसको

श्री गुसाईं तुलसीदासजी ने ज्ञान, भक्ति, वैराग्य मिश्रित दोहों को रामभक्तानुरागियों के उपकारार्थ रचा

उसीको

यन्त्रालय के श्रेष्ठ विद्वानों ने अतिपरिश्रम से शोधा

द्वितीय बार

लखनऊ

बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., के प्रबन्ध से

[नवलकि]शोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपी

सन् १९१२ ई० ॥

४ जुज़ ६ वर्क़

॥ श्रीः ॥

॥ दोहावली ॥

* गोस्वामि तुलसीदासकृत *

जिसमें

ज्ञान, वैराग्य, भक्ति आदि भरे ऐसे दोहे और संतोष की शिक्षायें हैं ॥

द्वितीयबार

लखनऊ

सुपरिंटेंडंट बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., के प्रबन्ध से

मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., के छापेखाने में छपी

सन् १९१३ ई०।



॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

दोहावली ॥

दोहा ।

राम बामदिशि जानकी, लषण दाहिनी ओर ।
ध्यान सकल कल्याणमय, सुरतरु तुलसी तोर ॥ १ ॥
सीता लषण समेत प्रभु, सोहत तुलसीदास । हरषत
सुर बरषत सुमन, सगुण सुमङ्गलबास ॥ २ ॥ पञ्च-
बटी बट बिटपतरु, सीतालषण समेत । सोहत तुलसी-
दास प्रभु, सकल सुमङ्गल देत ॥ ३ ॥ चित्रकूट सब
दिन बसत, प्रभु सिय लषण समेत । राम नाम जप
जाग कहि, तुलसी अभिमत देत ॥ ४ ॥ पय अहार
फल खाइ जो, रामनाम षटमास । सकल सुमङ्गल
सिद्धि सब, करतल तुलसीदास ॥ ५ ॥ रामनाम मणि
दीप धरु, जीह देहरी द्वार । तुलसी भीतर बाहिरो, जो

चाहसि उजियार ॥ ६ ॥ हिय निर्गुण नयनन सगुण, रसना नाम सुनाम । मनहुँ पुरट संपुट लसत, तुलसी ललित ललाम ॥ ७ ॥ सगुण ध्यान रुचि सरस नहिं, निर्गुण मन ते दूरि । तुलसी सुमिरहु रामको, नाम सजीवनमूरि ॥ ८ ॥ एकछत्र यकमुकुटमणि, सब वर्णहु पर जोइ । तुलसी रघुबर नामके, बरण बिराजत दोइ ॥ ९ ॥ रामनाम को अङ्क है, सब साधन है सून । अङ्क गये कछु हाथ नहिं, अङ्क रहे दशगून ॥ १० ॥ नाम राम को कल्पतरु, कलि कल्याण निवास । जो सुमिरत भयो भागते, तुलसी तुलसीदास ॥ ११ ॥ राम नाम जपि जोह जन, भये सुकृत सुख शालि । तुलसी यहां जो आलसी, गयो आजु की कालि ॥ १२ ॥ नाम गरीब निवाज को, राज देत जन जोन । तुलसी मन परहरत नहिं, घुरबिनियाकी बोन ॥ १३ ॥ काशी बिधि बसि बनु तजै, हठ तन तजै प्रयाग । तुलसी जो फल सो सुलभ, रामनाम अनुराग ॥ १४ ॥

मीठो अरु कठवति भरो, रौताई अरु षेम। स्वारथ परमारथ सुलभ, रामनाम के प्रेम ॥ १५ ॥ रामनाम सुमिरत सुयश, भाजन भये कुजात। कुतरु कुसुरपुर राज मग, लहत भुवन विख्यात ॥ १६ ॥ स्वारथ सुख सपनेहु अगम, परमारथ परवेश। रामनाम सुमिरत मिटहिं, तुलसी कठिन कलेश ॥ १७ ॥ मोर २ सब कह कहसि, तू को कहु निजनाम। कै चुप साधहि सुन समुझि, कै तुलसी जपु राम ॥ १८ ॥ हम लखु हमहिं हमार लखु, हम हमार के बीच। तुलसी अलखहि का लखहि, रामनाम जपु नीच ॥ १९ ॥ राम नाम अवलम्ब बिनु, परमारथ की आश। बर्षत बारिद बूंद गहि, चाहत चढ़न अकाश ॥ २० ॥ तुलसी हठि हठि कहत नित, चित सुन हितकर मान। लाभ राम सुमिरन बड़ी, बड़ी बिसारे हान ॥ २१ ॥ बिगरी जन्म अनेक की, सुधरै अबहीं आज। होहि राम की राम जपु, तुलसी तजि कुसमाज ॥ २२ ॥ प्रीति

प्रतीति सुरीति सों, रामनाम जपु राम। तुलसी तेरो है भलो, आदि मध्य परिनाम ॥ २३ ॥ दम्पति रस रसना दशन, परिजन बदन सगेह। तुलसी हर हित बरण शिशु, सम्पति सहज सनेह ॥ २४ ॥ बर्षाऋतु रघुपति भगति, तुलसी शालि सुदास। रामनाम बर-बरण जुग, सावन भादों मास ॥ २५ ॥ रामनाम नरकेशरी, कनककशिपु कलिकाल। जापक जन प्रहलाद जिमि, पालहिं दल सुरसाल ॥ २६ ॥ राम नाम कलिकाल तरु, सकल सुमङ्गलकन्द। सुमिरन करतल सिद्धि सब, पग पग परमानन्द ॥ २७ ॥ राम नाम कलिकामतरु, रामभक्ति सुरधेनु। सकल सुम-ङ्गल मूल जग, गुरुपद पङ्कज रेनु ॥ २८ ॥ यथा भूमि बस बीज में, नखत निवास अकाश। रामनाम सब धरममय, जानत तुलसीदास ॥ २९ ॥ सकल कामना-हीन जे, रामभक्ति रस लीन। नाम प्रेम पीयूष ह्रद, तिनहुँ किये मन मीन ॥ ३० ॥ ब्रह्मराम ते नाम

बड़, बरदायक बरदान। रामचरित शतकोटि महँ, लिय महेश जिय जान ॥ ३१ ॥ शबरी गीध सुसेवकन, सुगति दीन रघुनाथ। नाम उधारे अमित खल, वेदविदित गुण गाथ ॥ ३२ ॥ रामनाम पर रामते, प्रीति प्रतीति भरोस। सो तुलसी सुमिरत सकल, सगुन सुमङ्गलकोस ॥ ३३ ॥ लङ्क बिभीषण राज कपि, पति मारुत खग मीच। लही राम सो नाम रति, चाहत तुलसी नीच ॥ ३४ ॥ हरन अमङ्गल अघ अखिल, करन सकल कल्याण। रामनाम नित कहत हर, गावत वेद पुराण ॥ ३५ ॥ तुलसी प्रीति प्रतीतिसों, रामनाम जपु जागु। किये होय विधि दाहिनो, देइ अगेही भागु ॥ ३६ ॥ जल थल नभगति अमित अति, अग जग जीव अनेक। तुलसी तोहि से दीन को, रामनाम गति एक ॥ ३७ ॥ राम भरोसो रामबल, रामनाम बिश्वास। सुमिरि नाम मङ्गल कुशल, मांगत तुलसीदास ॥ ३८ ॥ रामनाम रति

रामगति, रामनाम निश्वास । सुमिरत शुभमङ्गल कुशल, चहुँ दिशि तुलसीदास ॥ ३९ ॥ रसना सापिनि बदन बिल, जो न जपहि हरिनाम । तुलसी प्रेम न रामसों, ताहि बिधाता बाम ॥ ४० ॥ हिय फाटहु फूटहु नयन, जरउ ते तन केहिकाम । द्रवहिं स्रवहिं पुलकहिं नहीं, तुलसी सुमिरत राम ॥ ४१ ॥ रामहिं सुमिरत रण भिरत, देत परत गुरु पाय । तुलसी जिन्हहिं न पुलक तन, ते जग जीवत जाय ॥ ४२ ॥

सो०–हृदय सो कुलिश समान, जो न द्रवहिं हरिगुण सुनत । कर न रामगुण गान, जीह सो दादुर जीह सम ॥ ४३ ॥ स्रवै न सलिल सनेहु, तुलसी सुनि रघुबीर यश । ते नैना जनिदेहु, राम करहु बरु आँधरे ॥ ४४ ॥ रहै न जलभरि पूरि, रामसुयश सुन रावरी । तिन आंखिन में धूरि, भर भर मूठी मेलिये ॥ ४५ ॥ बारक सुमिरत तोहिं, होहिं तिनहिं सनमुख सदा । क्यों न सम्हारहिं मोहिं, दयासिन्धु समरथ के ॥ ४६ ॥

साहिब होत सरोष, सेवक को अपराध सुनि। अपने देखे दोष, राम न कबहूं उर धरे॥ ४७॥

दो०—तुलसी रामहिं आपुते, सेवक की रुचि मीठि। सीतापति से साहिबहि, कैसे दीजै पीठि॥ ४८॥ तुलसी जाके होयगी, अन्तर बाहर दीठि। सो क्यों कृपालहि देइगो, केवट पालहि पीठि॥ ४६॥ प्रभु तरुतर कपि डार पर, कीन्हे आपु समान। तुलसी कहूं न रामसों, साहिब शीलनिधान॥ ५०॥ रे मन सबसों निरसकै, सरस राम सों होहि। भलो सिखावन देत है, निशिदिन तुलसी तोहि॥ ५१॥ हरे चरहिं तापहिं बरे, फरे पसारहिं हाथ। तुलसी स्वारथ मीत सब, परमारथ रघुनाथ॥ ५२॥ स्वारथ सीताराम सों, परमारथ सियराम। तुलसी तेरो दूसरे, द्वार कहा कहु काम॥ ५३॥ स्वारथ परमारथ सकल, सुलभ एकही ओर। द्वार दूसरे दीनता, उचित न तुलसी तोर॥ ५४॥ तुलसी स्वारथ रामहित, परमारथ रघुबीर। सेवक जाके

लषण से, पवनतनय रणधीर ॥ ५५ ॥ ज्यों जग बैरी मीन को, आपु सहित परिवार । त्यों तुलसी रघुबीर बिनु, गति आपनी बिचार ॥ ५६ ॥ रामप्रेम बिन दूबरो, रामप्रेमही पीन । रघुबर कबहूं करहिंगे, तुलसी ज्यों जलमीन ॥ ५७ ॥ राम सनेही राम गति, रामचरण रति जाहि । तुलसी फल जग जन्म को, दिये बिधाता ताहि ॥ ५८ ॥ आपु आपनेते अधिक, जेहि प्रिय सीताराम । तेहिके पगकी पानहीं, तुलसी तन को चाम ॥ ५६ ॥ स्वारथ परमारथ रहित, सीताराम सनेह । तुलसी सों फल चार को, फल हमार मत येह ॥ ६० ॥ जे जन रूखे बिषय रस, चिकने रामसनेह । तुलसी ते प्रिय राम को, कानन बसहिं कि गेह ॥ ६१ ॥ यथालाभ संतोष सुख, रघुबरचरण सनेह । तुलसी ज्यों मनमूढ़ सों, जस कानन तस गेह ॥ ६२ ॥ तुलसी जोपै रामको, नाहिंन सहज सनेह । मूड़ मुड़ायो बादिही, भांड़ भये तजि गेह ॥ ६३ ॥ तुलसी श्रीरघुबीर तजि, करे भरोसो

और। सुख संपति की कावली, नरकहु नाहीं ठौर ॥ ६४॥ तुलसी परिहरि हरि हरहिं, पांवर पूजहिं भूत। अन्त फजीहत होहिंगे, ज्यों गनिका के पूत ॥ ६५ ॥ सेये सीताराम नहिं, भजे न शङ्कर गौरि। जन्म गँवायो बादिही, रटत पराई पौरि ॥ ६६ ॥ तुलसी हरि अपमान ते, होइ अकाज समाज। राज करत रज मिलगये, सदल सकुल कुरुराज ॥ ६७ ॥ तुलसी रामहिं परिहरे, निपट हानि सुनिबेउ। सुरसरिगत सोई सलिल, सुरासरिस गंगेउ ॥ ६८ ॥ राम दूरि माया बढ़ति, घटत जान मन मांह। धूरि होति रबि दूरि लखि, शिरपर पगतर छांह ॥ ६९ ॥ साहिब सीतानाथसों, जब घटिहै अनुराग। तुलसी तबहीं भालते, भभरि भागिहै भाग ॥ ७० ॥ करिहौ कोशलनाथ तजि, जबहीं दूसरि आस। जहां तहां दुख पाइहौ, तबहीं तुलसीदास ॥ ७१ ॥ बिंधन ईंधन पाय ये, सागर जुरै न नीर। परै उपास कुबेर घर, जो बिपक्ष रघुबीर ॥ ७२ ॥ बर्षा को गोबर भयो, को चह

को कर प्रीति। तुलसी तू अनुभवहिं अब, रामविमुख की रीति ॥ ७३ ॥ सबहि समरथहि सुखद प्रिय, अच्छम प्रिय हितकारि। कबहुं न काहुहि रामपै, तुलसी कहा विचारि ॥ ७४ ॥ तुलसी उद्यम करमयुग, तव जहँ राम सुदीठि। होइ सुफल सोइ ताहि सब, सन्मुख प्रभु तन पीठि ॥ ७५ ॥ प्रेम काम तरु परिहरत, सेवत कलि तरु ठूंठ। स्वारथ परमारथ चहत, सकल मनोरथ झूंठ ॥७६॥ निज दूषण गुण रामके, समुझे तुलसीदास। होय भलो कलिकालहू, उभयलोक अनयास ॥ ७७ ॥ कै तोहि लागैं राम प्रिय, कै तू प्रभुप्रिय होहि। द्वै महँ रुचै जो सुगम सो, की वै तुलसी तोहि ॥ ७८ ॥ तुलसी द्वै महँ एकही, खेल छांड़ि छल खेलु। कै करु ममता रामसों, कै ममता पर हेलु ॥७९ ॥ निगम अगम साहेब सुगम, राम साचिलो चाह। अम्बु अशन अवलोकियत, सुलभ सबै जगमाह ॥ ८० ॥ सम्मुख आवत पथिक ज्यों, दिये दाहिना बाम। तैसोइ होत

सु आपकी, त्योंही तुलसीराम ॥ ८१ ॥ राम प्रेमपथमों बये, दिये बिषय तन पीठि । तुलसी केचुलि परिहरे, होत सांपहू दीठि ॥८२॥ तुलसी जौलौं विषय की,सुधा माधुरी मीठ । तौलौं सुधा सहस्रसम, राम भगत सुठ सीठ ॥ ८३ ॥ जैसो तैसो रावरो, केवल कोशलपाल । तौ तुलसीको है भलो, तिहूँलोक तिहुँकाल ॥ ८४ ॥ है तुलसी के एक गुण, अवगुणनिधि कह लोग । भलो भरोसो रावरो, राम रीझिबे योग ॥ ८५ ॥ प्रीति राममों नीतिपथ, चलिय राम रिस जीति । तुलसी सन्तनके मते, इहै भक्तिकी रीति ॥ ८६ ॥ सत्य बचन मानस बिमल, कपट रहित करतूति । तुलसी रघुबर सेवकहिं, सके न कलियुग धूति ॥ ८७ ॥ तुलसी सुख जो राम सों, दुखी सो निज करतूति । करम बचन मन ठीक जेहि, तेहि न सकै कलिधूति ॥ ८८ ॥ नातों नाते रामके, रामसनेह सनेहु । तुलसी मांगत जोरि कर, जन्म जन्म बिधि देहु ॥ ८९ ॥

सब साधन को एक फल, जेहि जानै सोइ जान।
ज्यों त्यों मन मन्दिर बसहिं, राम धरे धनु बान॥ ६०॥
जो जगदीश तो अति भलो, जो महीश तौ भाग।
तुलसी चाहत जन्मभरि, रामचरण अनुराग॥ ६१॥
परहु नरक फल चारि शिशु, मीच डाकिनी खाउ।
तुलसी रामसनेह को, जो फल सो जरिजाउ॥ ६२॥
हितसों हित रतिरामसों, रिपुसों बैर बिहाउ। उदासीन सबसों सरल, तुलसी सहज स्वभाउ॥ ६३॥ तुलसी ममता रामसों, समता सब संसार। राग न रोग न दोष दुख, दास भये भवपार॥ ६४॥ रामहिं डरु करु रामसों, ममता प्रीति प्रतीति। तुलसी निरुपधि राम को, भये हारि हूं जीति॥ ६५॥ तुलसी राम कृपाल सों, कहि सुनाउ गुण दोष। होय दूबरी दीनता, परम पीन संतोष॥ ६६॥ सुमिरण सेवा रामसों, साहब सों पहिंचान। ऐसहु लाभ न ललक जो, तुलसी नित हित हान॥ ६७॥ जाने जानन जोइये, बिनु

जाने को जान। तुलसी यह सुनि समुझि हिय, आनि धरे धनुबान ॥ ९८ ॥ करमठ कठमलिया कहै, ज्ञानी ज्ञानबिहीन। तुलसी त्रिपथ बिहायगो, राम दुआरे दीन ॥ ९९ ॥ बाधक सब सबके भये, साधक भये न कोय। तुलसी राम कृपालते, भली होय सो होय ॥ १०० ॥ शंकर प्रिय ममद्रोही, शिवद्रोही मम दास। ते नर करहिं कल्पभरि, घोर नरक महँ बास ॥ १०१ ॥ बिलग २ सुख सङ्गदुख, जियन मरण सोइ रीति। रहे ते राखे रामके, गये ते उचित अनीति ॥ १०२ ॥ जाय कहब करतूति बिनु, जाय योग बिनु क्षेम। तुलसी जाइ उपाय सब, बिना रामपद प्रेम ॥ १०३ ॥ लोग भनतु सबयोगही, योग जाय बिनु क्षेम। त्यों तुलसी के भाव गतु, रामप्रेम बिनु नेम ॥ १०४ ॥ राम निकाई रावरी, है सबही को नीक। जो यह सांची है सदा, तो नीको तुलसीक ॥ १०५ ॥ तुलसी राम जो आदरो, खोटो खरो खरोइ। दीपक काजर शिर धरो,

धरो सुधरो धरोइ ॥ १०६ ॥ तन बिचित्र कायर बचन, अहि अहार मन घोर। तुलसी हरि भये पक्षधर, ताते कह सब मोर ॥ १०७ ॥ लहै न फूटी कौड़िहू, को चाहै कयहि काज। सो तुलसी महँगो कियो, राम गरीब नि-वाज ॥ १०८ ॥ घर घर मांगे टूक पुनि, भूपति पूजे पायँ। ते तुलसी सब रामबिनु, ते अब राम सहायँ ॥ १०९ ॥ तुलसी राम सुदीठि ते, निबल होत बलवान। बालि बैर सुग्रीव के, कहा कियो हनुमान ॥ ११० ॥ तुलसी रामहिते अधिक, रामभक्ति जिय जान। ऋणियां राजाराम सो, धनी भयो हनुमान ॥ १११ ॥ कियो सो सेवक धर्म कपि, प्रभु कृतज्ञ जिय जान। जोरि हाथ ठाढ़े भये, बरदायक बरदान ॥ ११२ ॥ भक्तभये भगवान प्रभु, राम धरो तनु भूप। किय चरित्र पावन परम, प्राकृत नर अनुरूप ॥ ११३ ॥ ज्ञान गिरा गोतीत अज, मायागुण गोपार। सोइ सच्चिदानन्दघन, करत चरित्र उदार ॥ ११४ ॥

हिरण्याक्ष भ्रातासहित, मधुकैटभ बलवान । ज्यहि मारे सो अवतस्यो, कृपासिन्धु भगवान ॥ ११५ ॥ शुद्ध सच्चिदानन्दमय, कन्द भानुकुलकेतु । चरित करत नर अनुहरत, संसृतसागरसेतु ॥ ११६ ॥ बाल बिभूषण बसन बर, धूरि धूसरित अङ्ग । बाल केलि रघुबर करत, बाल बन्धु सब सङ्ग ॥ ११७ ॥ अनुदिन अवध बधावने, नित नव मङ्गल मोद । मुदित मातु पितु लोगलखि, रघुबर बालबिनोद ॥ ११८ ॥ राज अजिर राजत रुचिर, कोशल पालक बाल । जानु पाणिचर चरितबर, सगुण सुमङ्गलमाल ॥ ११९ ॥ नाम ललित लीला ललित, ललित रूप रघुनाथ । ललित बसन भूषण ललित, ललित अनुज शिशु साथ ॥ १२० ॥ राम भरत लक्ष्मण ललित, शत्रुशमन शुभनाम । सुमिरत दशरथसुवन सब, पूजहि सब मन काम ॥१२१॥ बालक कोशलपाल के, सेवक बाल कृपाल । तुलसी मन मानस बसत, मङ्गल मञ्जु मराल॥ १२२ ॥ भक्त

भूमि भूसुर सुरभि, सुरहित लागि कृपाल । करतचरित धरि मनुज तनु, सुनत मिटहिं जञ्जाल ॥ १२३ ॥ निज इच्छा प्रभु अवतरैं, सुर गो द्विज हित लागि । सगुण उपासक सङ्ग तहँ, रहे मोक्ष सब त्यागि॥ १२४॥ परमानन्द कृपायतन, मन परिपूरणकाम । प्रेमभक्ति अनपावनी, हमहिं देहु श्रीराम ॥ १२५ ॥ बारिमथे घृत होय बरु, सिकताते बरु तेल । बिनु हरिभजन न भव तरै, यह सिद्धान्त अपेल ॥ १२६ ॥ हरिमाया कृत दोष गुण, बिनु हरि भजन न जाहिं । भजियराम सब काम तजि, अस बिचारि मनमाहिं ॥ १२७ ॥ जो चेतनकहँ जड़ करै, जड़ै करहिं चैतन्य । अस समरथ रघुनायकहिं, भजहिं जीव ते धन्य ॥ १२८ ॥ श्री रघुबीर प्रताप ते, सिन्धु तरे पाषान । ते मतिमन्द जे राम तजि, भजहिं जाय प्रभु आन ॥ १२९ ॥ लवनिमेष परमानु युग, बर्ष कल्प शरचण्ड । भजहि न मन त्यहि रामकहँ, काल जासु को दण्ड ॥ १३० ॥ तबलगि

कुशल न जीवकहँ, सपनेहुँ मन बिश्राम। जबलगि भजत न रामपद, शोकधाम तजि काम ॥ १३१ ॥ बिनु सतसङ्ग न हरिकथा, त्यहि बिनु मोह न भाग। मोह गये बिनु रामपद, होय न दृढ़ अनुराग ॥ १३२ ॥ बिनु बिश्वासै भक्ति नहिं, त्यहि बिनु द्रवहिं न राम। रामकृपा बिनु सपनेहुँ, जीव न लह बिश्राम ॥ १३३ ॥

सो०—अस बिचारि मन धीर, तजि कुतर्क संशय सकल। भजहु राम रघुबीर, करुणाकर सुन्दर सुखद ॥ १३४ ॥ भाववश्य भगवान्, सुखनिधान करुणाभवन। तजि ममता मद मान, भजिय सदा सीतारमन ॥ १३५ ॥ कहहिं बिमलमत सन्त, वेद पुराण बिचारि सब। द्रवैं जानकीकन्त, तब छूटै संसारदुख ॥ १३६ ॥ बिन गुरुहोइ न ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु। गावहिं वेदपुरान, सुख कि लहिय हरिभक्तिबिनु॥ १३७॥

दो०—रामचन्द्र के भजन बिनु, जो चह पद निर्वान। ज्ञानवन्त अपि सो नर, पशु बिनु पूछ

बिषान ॥ १३८॥ जरो सो सम्पति सदन सुख, सुहृद मातु पितु भाइ। सन्मुख होत जो रामपद, करै न सहज सहाइ ॥ १३९ ॥ सोइ साध सुनि समुझिकर, रामभक्ति थिरताइ। लड़िकाईं को पैरिबो, तुलसी बिसरि न जाइ॥ १४० ॥ सबै कहावत रामके, सबहि रामकी आस। राम कहैं ज्यहि आपनो, त्यहि भजु तुलसीदास ॥ १४१ ॥ ज्यहि शरीर रति रामसों, सोइ आदरे सुजान। रुद्र देह तजि नेह बश, बानरभे हनुमान ॥ १४२ ॥ जानि रामसेवा सरस, समुझि करब अनुमान। पुरिखाते सेवक भये, हरते भे हनुमान ॥ १४३ ॥ तुलसी रघुबर सेवकहि, खलढाढ़स मनमाँख। बाजराज के बालकहिं, लवा दिखावत आँख ॥ १४४ ॥ रावण रिपुके दाससों, कायर करहिं कुचालि। खरदूषण मारीच ज्यों, नीच जाहिंगे कालि ॥ १४५ ॥ पुण्य पाप यश अयशके, भावी भाजन भूरि। सङ्कट तुलसीदास को, राम करहिंगे दूरि ॥ १४६ ॥ खेलत बालक ब्याल सँग, मेलत पावक हाथ।

तुलसीशिशु पितुमातुज्यों, राखत सिय रघुनाथ॥ १४७॥
तुलसी दिनभल शाह कहँ, भली चोर कहँरात। निशि
बासरताकहँ भलो, मानै रामहि नात॥ १४८॥ तुलसी
जन निज सुनि समुझि, कृपासिन्धु रघुराज। महँगे
मणि कञ्चन किये, सोंधो जग जल नाज॥ १४९॥
सेवा शील सनेह वश, सुखद सुयोग बियोग। तुलसी
ते सब रामसों, सुखद सुयोग बियोग॥ १५०॥ चारि
चहत मनसा अगम, चनक चारिको लाहु। चारि प-
रिहरे चारिको, दानि चारि चखचाहु॥ १५१॥ सूधेमन
सूधे बचन, सूधी सब करतूति। तुलसी सूधी सकल
बिधि, रघुबर प्रेम प्रसूति॥ १५२॥ बिषबिद्ध बोलनि म-
धुर मन, कटु कर हृदय मलीन। तुलसी राम न पाइये,
भये बिषय जल मीन॥ १५३॥ बचन बेषते जो बनै,
सो बिगरै परिणाम। तुलसी मन ते जो बनै, बनी
बनाई राम॥ १५४॥ नीच मीच लै जाइ जो, राम
रजायसु पाइ। तो तुलसी तेरो भलो, नत अनभलो

अघाइ ॥ १५५ ॥ जातिहीन अघ जन्ममहि, मुक्ति कीन
असि नारि। महामन्द मन सुख चहहिं, ऐसे प्रभुहिं
बिसारि ॥ १५६ ॥ बन्धु बधूरत क्यहि कियो, बचन निरु-
त्तर बालि। तुलसीप्रभु सुगरीब की, चितै न कछू कु-
चालि ॥ १५७ ॥ बालिबली बलशालिदल, सखा कीन्ह
कपिराज। तुलसी रामकृपाल को, बिरद गरीब नि-
वाज ॥ १५८ ॥ कहा बिभीषण लै मिलो, कहा बिगारी
बालि। तुलसी प्रभु शरणागतहि, सब दिन आयो
पालि ॥ १५९ ॥ तुलसी कोशलपालसों, को शरणागत
पाल। भजें बिभीषणबन्धुमय, भंज्यो दारिदकाल ॥ १६०।
कुलिशहु चाहि कठोर अति, कोमल कुसुमहु चाहि
चित खगेश असरामकेरे, समुझिपरै कहु काहि ॥ १६१।
बलकल भूषण फल अशन, बिनु शय्या द्रुमप्रीति
तेहि समय लङ्का दई, यह रघुबर की रीति ॥ १६२।
जो संपति शिवरावणहिं, दीन दिये दशमाथ। सो सं
पदा बिभीषणहिं, सकुचि दीन रघुनाथ ॥ १६३ ॥ अबि

चत्तराज बिभीषणहिं, देहि राम रघुराज। अजहु बिराजत लङ्कपुर, तुलसी सहित समाज॥ १६४॥ कहा बिभीषण लै मिल्यो, कहा दियो रघुनाथ। तुलसी यह जाने बिना, मूढ़ मींजिहहिं हाथ॥ १६५॥ बैरिबन्धु निशिचर अधम, तजो न भरे कलङ्क। झूठ अर्थ सिय परिहरी, तुलसी सोय अशङ्क॥ १६६॥ त्यहि समाज कियो कठिनपन, जेहि तौल्यो कैलास। तुलसी प्रभु महिमा कहौं, सेवकको बिश्वास॥ १६७॥ सभा सभासद निरखिपट, पकरि उठाये हाथ। तुलसी किये इगारहौं, बसन बेष यदुनाथ॥ १६८॥ त्राहि तीन कहि द्रौपदी, तुलसी राजसमाज। प्रथम बढ़े पट चित बिकल, चहत चकित निजकाज॥ १६९॥ सुखजीवन सबकोउ चहत, सुखजीवन हरिहाथ। तुलसी दाता मांगन्यो, देखियत अबुध अनाथ॥ १७०॥ कृपणदेइ पाइयपरो, बिनसाधन सिधि होय। सीतापति सन्मुख समुझि, जो कीजै शुभसोय॥ १७१॥ दण्डकबन पावन करन,

चरणसरोज प्रभाउ। ऊसर जामहि खल तरहि, होहि रङ्क ते राउ ॥ १७२ ॥ बिनही ऋतु तरुवर फरहिं, शिला द्रवहिं जल जोर। रामलषण सिय करिकृपा, जब चितवहिं जेहि ओर ॥ १७३ ॥ शिला सो तिय भइ गिरि तरे, मृतक जिये जग जान। राम अनुग्रह सगुन शुभ, सुलभ सकल कल्यान ॥ १७४ ॥ शिलाशाप मोचन चरण, सुमिरहु तुलसीदास। तजहु शोच संकट मिटहिं, पूजहिं मनकी आस ॥ १७५ ॥ मरे जिआये भालुकपि, अवध विप्रको पूत । सुमिरहु तुलसी ताहि तू, जाको मारुत दूत ॥ १७६ ॥ काल करम गुण दोष जग, जीव तिहारे हाथ । तुलसी रघुबर रावरो, जान जानकी नाथ ॥ १७७ ॥ रोगनिकर तनु जरठपन, तुलसी सँगको लोग। रामकृपालय पालिये, दीनपालिबे योग ॥ १७८ ॥ मो सम दीन न दीन हित, तुमसमान रघुबीर। अस बिचारि रघुबंशमणि, हरहु विषम भव भीर ॥ १७९ ॥ भवभुवंग तुलसी नकुल, डसत ज्ञान हरिलेत। चित्र-

कूट इक औषधी, चितवत होत सचेत ॥ १८० ॥ हौंहु कहावत सब कहत, राम सहत उपहास । साहब सीता राम सो, सेवक तुलसीदास ॥ १८१ ॥ रामराज राजत सकल, धरम निरत नरनारि । राग न रोष न दोष दुख, सुलभ पदारथ चारि ॥ १८२ ॥ रामराज संतोषसुख, घर बन सकल सुपास । सुरतरु तरु सुरधेनु महि, अभिमत भोग बिलास ॥ १८३ ॥ खेती बणि बिद्या बणिज, सेवा शिल्प सो काज । तुलसी सुरतरु सरिस सब, सुफल रामके राज ॥ १८४ ॥ दण्ड यतिन कर भेद जहँ, नरतक नृत्यसमाज । जीतहु मनहि न सुनिय अस, रामचन्द्र के राज ॥ १८५ ॥ कोपे शोचत पीच कर, करिय निहारन काज । तुलसी परमित प्रीतिकी, रीति राम के राज ॥ १८६ ॥ मुकुर निरखि मुख रामभ्रू, गनत गुनहिं दै दोष । तुलसी से शठ सेवकनि, लखि निज परहि सरोष ॥ १८७ ॥ सहस नाम सुनि भनित सुनि, तुलसी बल्लभ नाम । सकुचत हिय हँसि

निरखि सिय, धरम धुरन्धर राम ॥ १८८॥ गौतम तिय गति सुरति करि, नहिं परसति पग पानि । हिय हर्षे रघुबंशमणि, प्रीति अलौकिक जानि ॥ १८६ ॥ तुलसी बिलसत नखत निशि, शरद सुधाकर साथ । मुक्ताझालर झलक जनु, राम सुयश शिशु हाथ ॥ १६० ॥ रघुपति कीरति कामिनी, क्यों कहै तुलसीदास । शरद प्रकाश अकाश छबि, चारु चिबुक तिल जास ॥ १६१ ॥ प्रभु गुणगण भूषण बसन, बिशद बिशेष सुदेश । राम सुकीरति कामिनी, तुलसी करतब केश ॥ १६२ ॥ रामचरित राकेश पर, सरिस सुखद सब काहु । सज्जन कुमुद चकोर चित, हितविशेष बड़लाहु ॥ १६३ ॥ रघुबर कीरति सज्जनानि, शीतल खलनि सुताति । ज्यों चकोर चय चक्रवानि, तुलसी चादनि राति ॥ १६४ ॥ रामकथा मन्दाकिनी, चित्रकूट चित चारु । तुलसी सुभग सनेह बन, सिय रघुबीर बिहारु ॥ १६५ ॥ श्याम सुरभिपय बिशद अति, गुनदकरहि सबपान । गिराग्राम

सियरामयश, गावहिं सुनहिं सुजान ॥ १९६ ॥ हरिहर यश सुरनर गिरन्ह, बर्णहिं सुकबि समाज । हाटी हाटक घटित चरु, रांधे स्वाद सुनाज ॥ १९७ ॥ तिलपर राख्यो सकल जग, बिदित बिलोकत लोग । तुलसी महिमा रामकी, कोउ न जानिबे योग ॥ १९८ ॥

सो०—रामस्वरूप तुम्हार, बचन अगोचर बुद्धि पर । अबिगति अकथ अपार, नेति २ नित निगमकह ॥ १९९ ॥

दो०—माया जीव सुभाव गुण, काल करम महदाद । ईश अङ्कते बढ़त सब, ईश अङ्क बिनु बाद ॥ २०० ॥ हित उदास रघुबर बिरह, बिकल सकल नरनारि । भरत लषण सिय गति समुझि, प्रभु चष सदा सुचारि ॥ २०१ ॥ सीय सुमित्रा सुवन गति, भरत सनेह सुभाउ । कहिबेको शारद सरस, जानिबेको रघुराउ ॥ २०२ ॥ जानहिं राम न कहिसकैं, भरतलखन सिय प्रीति । समुझिसो सुनि तुलसी कहत, हठ शठताकी रीति ॥ २०३ ॥ सब बिधि समरथ सकल कहि, सहि सांसन दिनराति ।

भलो निबाहो सुनि समुझि, स्वामि धर्म सब भाँति ॥
२०४ ॥ भरतहि होइ न राजमद, बिधिहरिहर पदपाइ।
कबहुँक कांजी सीकरनि, क्षीरसिन्धु बिनसाइ॥ २०५॥
संपति चकई भरत चक, मुनि आयसु खिलवार। तिहि
निशि आश्रम पींजरा, राखेभा भिनुसार ॥ २०६ ॥
सधन चोर सँग मुदितमन, धनी गहै ज्यों फेंट।
त्यों सुग्रीव बिभीषणहि, भई भरत की भेंट ॥ २०७ ॥
राम सराहे भरत उठि, मिले रामसम जानि। तदपि
बिभीषण कीशपति, तुलसी गरन गलानि ॥ २०८ ॥
भरतश्याम तन रामसम, समगुण रूपनिधान। सेवक
सुखदायक सुलभ, सुमिरत सब कल्यान ॥ २०९ ॥
लसत लखन मूरति मधुर, सुमिरहु सहित सनेह। सुख
सम्पति कीरति विजय, सगुण सुमङ्गल गेह ॥ २१० ॥
नाम शत्रुसूदन सुभग, सुषमा शीलनिकेत। सेवत
सुमिरत सुलभसुख, सकल सुमङ्गल देत ॥२११॥ कौ-
शल्या कल्याणमय, मूरति करत प्रणाम। शकुन सुम-

ङ्गल काजशुभ, कृपा करहिं सियराम ॥ २१२ ॥ सुमिरि सुमित्रा नाम जग, जे तिय लेहिं सुनेम। सुवन लखन रिपुदमन से, पावहिं पतिपद प्रेम ॥ २१३ ॥ सीता चरण प्रणाम करि, सुमिरि सुनाम सुनेम। सो तिय होहि पतिदेवता, प्राणनाथप्रिय प्रेम ॥ २१४ ॥ तुलसी केवल कामतरु, रामचरित्र आराम। कलितरु कपि निशचर कहत, हमहिं किये बिधि बाम ॥ २१५ ॥ मातु सकल सानुज भरत, गुरु पुरलोग सुभाउ। देखत २ केकयिहि, लङ्कापति कपिराउ ॥ २१६ ॥ सहजसरल रघुबर बचन, कुमति कुटिल करि जान। चलै जोंक जिमि बक्रगति, यद्यपि सलिल समान ॥२१७॥ दश-रथ नाम सुकामतरु, फलै सकल कल्यान। धरणिधाम धन धरमसुत, सद्‌गुणरूप निधान ॥ २१८ ॥ तुलसी जान्यो दशरथहिं, धर्म न सत्य समान। राम तजे ज्यहि लागिवन, आपु परिहरे प्रान ॥ २१९ ॥ राम बिरह दशरथमरण, मुनि मन अगम सुमीचु। तुलसी

मङ्गल मरणतरु, शुचि सनेह जल सींचु ॥ २२० ॥
सो०—जीवन मरण सनाम, जैसे दशरथ राय को। जियत खिलाये राम, राम बिरह तनु परिहरेउ ॥ २२१ ॥
दो०—प्रभुहि बिलोकत गीधगति, सियहित घायल नीचु। तुलसी पाई गीधपति, मुक्ति मनोहर मीचु ॥ २२२ ॥ बिर्त कर्मरत भरत मुनि, सिद्ध ऊंच अरु नीच। तुलसी सकल सिहात सुनि, गीधराज की मीच ॥ २२३ ॥ मुये मरत मरिहैं सकल, घरीपहर के बीच। लही न काहू आज लौं, गीधराज की मीच ॥ २२४ ॥ मुये मुक्त जीवत मुकत, मुकत मुक्तहू बीच। तुलसी सबही ते अधिक, गीधराज की मीच ॥ २२५ ॥ रघुबर बिकल बिहङ्गलखि, सो बिलोकि दोउ बीर। सियसुधि कहि सिय राम कहि, तजी देह मति धीर ॥ २२६ ॥ दशरथ ते दशगुण भगति, सहे तासु करकाज। शोचत बन्धु समेत प्रभु, कृपासिन्धु रघुराज ॥ २२७ ॥ केवट निशिचर विहँगमृग, किये साधु सनमानि। तुलसी

रघुबर की कृपा, सकल सुमङ्गल खानि॥ २२८॥ मञ्जुल मङ्गल मोदमय, मूरति मारुतपूत । सकल सिद्ध कर कमलतल, सुमिरत रघुबर दूत ॥ २२९ ॥ धीरबीर रघुबीर प्रिय, सुमिरि समीर कुमार । अगम सुगम सब काजकर, करतल सिद्धि बिचार ॥ २३० ॥ सुखमुदमङ्गल कुमुद विधु, सगण सरोरुहभानु । करहु काज सब सिद्धि शुभ, आनि हिये हनुमानु ॥ २३१ ॥ सकल काज शुभ समउ भल, सगुण सुमङ्गल जानु । कीरति बिजय बिभूति भलि, हिय हनुमानहिं आनु ॥ २३२॥ शूरशिरोमणि साहसी, सुमति समीरकुमार । सुमिरत सबसुख संपदा, मुद मङ्गल दातार ॥ २३३ ॥ तुलसी तन सर सुख जलज, भुज रुज गजबरजोर। दलत दयानिधि देखिये, कपि केशरी किशोर ॥ २३४ ॥ भुजतरु कोटर रोग अहि, बरबश कियो प्रबेश । बिहँगराज बाहन तुरत, काढ़िय मिटै कलेश ॥ २३५ ॥ बाहु बिटप सुख बिहँग थल, लगी कुपीर कुआगि ।

रामकृपा जल सींचिये, बेगि दीन हितलागि ॥२३६॥
सो०—मुक्तिजन्म महिजानि, ज्ञानखानि अघहानि कर। जहँ बस शंभुभवानि, सो काशी सेइय कसन॥ २३७॥ जरत सकल सुरबृन्द, बिषमगरल जेहि पान किय। तेहि न भजसि मतिमन्द, को कृपाल शंकर सरिस॥ २३८॥ दो०॥ बासर ठासनि के ठका, रजनी चहुँदिशि चोर। शंकर निजपुर राखिये, चितै सुलोचन कोर॥ २३९॥ अपनी बीसो आपुही, पुरिहि लगाये हाथ। क्यहि बिधि बिनती बिश्व की, करै बिश्व के नाथ॥ २४०॥ और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग। अति बिचित्र भगवन्त गति, कोउ न जानिबे योग॥ २४१॥ प्रेमसरी परपञ्च रुज, उपजी अधिक उपाधि। तुलसी भलो सुबेदई, बेगि बांधिये व्याधि॥ २४२॥ हम हमार आचार बड़, भूरि भारधर शीश। हठि शठ परबश परत जिमि, करी कोश कृमि कीश॥ २४३॥ क्यहि मग प्रविशत जा-

ति केहि, ज्यों दर्पण में छांह। तुलसी त्यों जग जीव गति, करी जीह के नांह ॥ २४४ ॥ सुखसागर सुख नींद बश, सपने सब करतार। माया मायानाथ की, को जग जाननहार ॥ २४५ ॥ जीव सीव सम सुख शयन, सपने कछु करतूति। जागत दीन मलीन सोइ, बिकल बिषाद बिभूति ॥ २४६ ॥ सपने होय भिखारि नृप, रङ्क नाकपति होय। जागे लाभ न हानि कछु, तिमि प्रपञ्च जिय जोय ॥ २४७ ॥ तुलसी देखत अनुभवत, सुनत न समुझत नीच। चपरि चपेटे देत नित, केश गहे कर मीच ॥ २४८ ॥ करम खरी कर मोह थल, अङ्क चराचर जाल। हनत गनत गनि गुणि हनत, जगत ज्योतिषी काल ॥ २४९ ॥ कहिबे कहँ रसनारची, सुनिबे कहँ किय कान। धरिके चितहित सहित सुनि, परमारथहिं सुजान ॥ २५० ॥ ज्ञान कहै अज्ञान बिनु, तम बिनु कहै प्रकास। निरगुण कहै जो सगुण बिनु, सो गुरु तुलसीदास ॥ २५१ ॥ अङ्क अगुण

आखर सगुण, समुझि उभय आपार । खोये राखे आप भल, तुलसी चारु बिचार ॥ २५२ ॥ परमारथ पहिंचानि मति, लसति बिषय लपटानि । निकसि चिता ते अध जरति, मानहु सती परानि ॥ २५३ ॥ शीश उघारन किन कहेउ, बरजिरहे प्रियलोग । घरही सती कहावती, जरती नाहिं बियोग ॥ २५४ ॥ खरिआ खरी कपूर सब, उचित न पियतिय त्याग । कै खरिआ मोहि मेलिकै, बिलम बिबेकबिराग ॥ २५५ ॥ घर कीन्हे घरु जात है, घर छांड़े घर जाय । तुलसी घर बन बीचहीं, राम प्रेमपुर छाय ॥ २५६ ॥ दिये पीठि पाछे लगै, सन्मुख होत पराय । तुलसी सम्पति छांहज्यों, लखि दिन बैठ गँवाय ॥ २५७ ॥ तुलसी अद्भुत देवता, आशा देवी नाम । सेये शोक समर्पई, विमुखभये अभिराम ॥ २५८ ॥ सोई सेंबर टेसुवा, सेवत सदा बसन्त । तुलसी महिमा मोहको, सुनत सराहत सन्त ॥ २५९ ॥ करत न समुझत झूठ गुण, सुनत होत मतिरङ्क । पारद प्रकट प्रपञ्चमय,

सिद्धिहि नाउ कलङ्क ॥ २६० ॥ ज्ञानी तापस शूर कवि, कोबिद गुण आगार । केहिकै लोभ बिडम्बना, कीन्ह न यहि संसार ॥ २६१ ॥ श्रीमदबक्र न कीन केहि, प्रभुता बधिर न काहि । मृगनयनीके नयन शर, को अस लागि न जाहि ॥ २६२ ॥ व्यापि रहेउ संसारमहँ, माया कटक प्रचण्ड । सेनापति कामादि भट, कपट दम्भ पाखण्ड ॥ २६३ ॥ तात तीनि अति प्रबल खल, काम क्रोध अरु लोभ । मुनि बिज्ञान सुधाम मन, करहिं निमिष महँ क्षोभ ॥ २६४ ॥ लोभ के इच्छा दम्भ बल, काम के केवल नारि । क्रोध के परुष बचन बल, मुनिबर कहहिं बिचारि ॥ २६५ ॥ काम क्रोध लोभादि मद, प्रबल मोहको धारि । तिनमहँ अति दारुण दुखद, मायारूपी नारि ॥ २६६ ॥ का नहिं पावक जरिसकै, का न समुद्र समाय । का न करै अबलाप्रबल, कयहि जग काल न खाय ॥ २६७ ॥ जन्म पत्रिका बर्त्तिकै, देखहु मनहिं बिचारि । दारुण बैरी मीचुके, बीच बिरा-

जाति नारि ॥ २६८ ॥ दीपशिखा सम युवति रस, मनजनि होसि पतङ्ग। भजहि राम तजि काम मद, करहि सदा सतसङ्ग ॥ २६९ ॥ काम क्रोध मद लोभ रत, गृहासक्त दुखरूप। ते किमि जानहिं रघुपतिहि, मूढ़ परे तमकूप ॥ २७० ॥ ग्रहगृहीत पुनि बातबश, त्यहि पुनि बीछी मार। ताहि पियाई बारुणी, कहहु कौन उपचार ॥ २७१ ॥ ताहि की सम्पति सगुण शुभ, सपनेहु मन बिश्राम। भूत द्रोहरत मोह बश, राम विमुख रतिकाम ॥ २७२ ॥ कहत कठिन समुझत कठिन, साधन कठिन बिबेक। होइ घुनाक्षर न्याय ज्यों, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥ २७३ ॥ खल प्रबोधि जग शोध मन, को निरोध कुल शोध। करहि ते फोकट पचि मरहिं, सपनेहु सुख न सुबोध ॥ २७४ ॥ सो०— कोउ बिश्राम कि पाव, तात सहज सन्तोष बिनु। चलै कि जल बिनु नाव, कोटि यतन पचि पचि मरै ॥ २७५ ॥ सुर नर मुनि कोउ नाहिं, जेहि न मोह

माया प्रबल । अस बिचारि मन माहिं, भजिय महा मायापतिहि ॥ २७६ ॥ दो०- एक भरोसो एक बल, एक आस विश्वास । एक राम घनश्याम हित, चातक तुलसीदास ॥ २७७ ॥ जो घन बरषैं समय शिर, जो भरि जन्म उदास । तुलसी याचक चातकहि, तऊ तिहारी आस ॥ २७८ ॥ चातक तुलसी के मते, स्वातिहु पियै न पानि । प्रेम तृषा बाढ़त भला, घटे घटैगी कानि ॥ २७९ ॥ रटत २ रसना लटी, तृषा सूखि गई अङ्ग । तुलसी चातक प्रेमको, नित नूतन रुचि रङ्ग ॥ २८० ॥ चढ़त न चातक चित कबहुँ, प्रिय पयोदके दोष । तुलसी प्रेम पयोधि की, ताते नाप न जोप ॥ २८१ ॥ बरषि परुष पाहन पयद, पंखकरौं दुइ टूक । तुलसी परा न चाहिये, चतुर चातकहिं चूक ॥ २८२ ॥ उपलबरषि गरजत तरजि, डारत कुलिश कठोर । चितौ कि चातक मेघ तजि, कबहुँ दूसरी ओर ॥ २८३ ॥ पवि पाहन दामिन गरज, झरि

झकोर खरि झीझि। रोष न प्रीतम दोष लखि, तुलसी रामहि रीझि॥ २८४॥ मान राखिबो मांगिबो, पिय सो नित नवनेहु। तुलसी तीनिउ तब फबै, जब चातक मतलेहु॥ २८५॥ तुलसी चातकही फबै, मान राखिबो प्रेम। बक्र बूंद लखि स्वातिहू, निदरि निबाहत नेम॥ २८६॥ तुलसी चातक मांगनो, एक एक घनि दानि। देत जो भूभाजनभरत, लेत जो घूटक पानि॥ २८७॥ तीनि लोक तिहुँ काल में, चातकही के माथ। तुलसी जासु न दीनता, सुनी दूसरे नाथ॥ २८८॥ प्रीति पपीहा पयदकी, प्रकट नई पहिंचानि। याचक जगति कनौउड़ी, कियो कनौड़ी दानि॥ २८९॥ नहिं याचक नहिं संग्रही, शीश नाइ नहिं लेइ। ऐसे मानिहि मांगनेहि, को बारिद बिन देइ॥ २९०॥ किन किन ज्यायो जगतमें, जीवन दायक दानि। भयो कनौड़ी याचकहि, पयदप्रेम पहिंचानि॥ २९१॥ साधन सांसत सब सहत, सबहिं सुखद फल

लाहु। तुलसी चातक जलधि की, रीति बूझि बुध काहु ॥ २९२ ॥ चातक जीवनदायकहि, जीवन समय सुरीति। तुलसी अलख न लखि परैं, चातक प्रीति प्रतीति ॥ २९३ ॥ जीव चराचर जहँ लगे, है सब को हित मेह। तुलसी चातक मन बस्यो, घन सों सहज सनेह ॥ २९४ ॥ डोलत बिपुल बिहंग बन, पियत पोपरन बारि। सुयश धवल चातक नवल, तुही भुवन दशचारि ॥ २९५ ॥ मुख मीठे मानस मलिन, कोकिल मोर चकोर। सुयश धवल चातक नवल, रहेउ भुवन भरि तोर ॥ २९६ ॥ बासबेष बोलनि चलनि, मानस मञ्जु मराल। तुलसी चातक प्रेम की, कीरति बिशद बिशाल ॥ २९७ ॥ प्रेम न परखिय पुरुष पन, पयद सिखावन येह। जग कहै चातक पातकी, ऊसर बरषै मेह ॥ २९८ ॥ होइ न चातक पातकी, जीव न दानिन मूढ़। तुलसी गति प्रहलाद की, समुझि प्रेम पथ गूढ़ ॥ २९९ ॥ गरज आपनी सबन को, गरज

करत उर आनि । तुलसी चातक चतुर भो, याचक जानि सुदानि ॥ २०० ॥ चरग चंगुगत चातकहि, नेम प्रेम की पीर । तुलसी परबस हाड़पर, परिहैं पुहुमी नीर ॥ ३०१ ॥ बँध्यो बधिक पस्यो पुराय जल, उलटि उठाई चोंच । तुलसी चातक प्रेमपट, परतहु लगी न खोंच ॥ ३०२ ॥ अराडफोरि कियो चेटतुख, पूरो नीर निहारि । गहि चंगुल चातक चतुर, डास्यो बाहिर बारि ॥ ३०३ ॥ तुलसी चातक देत सिख, सुतहि बारही बार ॥ तात न तर्पण कीजिये, बिना बारिधर धार ॥ ३०४ ॥

सो०—जियत न नाई नारि, चातक घन तजि दूसरहि । सुरसरि हूं की बारि, मरत न मांगेउ अरघ जल ॥ ३०५ ॥ सुनरे तुलसीदास, प्यास पपीहहि प्रेम को । परिहरि चारिउ मास, जो अचवै जल स्वाति को ॥ ३०६ ॥ याचै बारहमास, पियै पपीहा स्वातिजल । जान्यो तुलसीदास, जुगवत नेही नेह मन ॥ ३०७ ॥

दो०—तुलसीके मत चातकहि, केवल प्रेम पियास ।

पियत स्वातिजल जान जग, याचक बारहमास ॥ ३०८ ॥ आलबाल मुक्ताहलनि, हिय सनेह तरुमूल। होइ हेतु चित चातकहि, स्वाति सलिल अनुकूल ॥ ३०९ ॥ बिबिरसनी तन श्यामहैं, बङ्कचलनि बिषखानि। तुलसी यश श्रवणन सुन्यो, शीश समर्प्यो आनि ॥ ३१० ॥ उष्णकाल अरु देह तृषित, मगपन्थी तन ऊख। चातक बतियां नारुचे, अनजल सींचै रूख ॥ ३११ ॥ अनजल सींचे रूखकी, छायाते बरु घाम। तुलसी चातक बहुत है, यह प्रवीणका काम ॥ ३१२ ॥ एकअङ्ग जो सनेहता, निशि दिन चातकनेह। तुलसी जासों हितलगै, वहि अहार वो देह ॥ ३१३ ॥ आप व्याध को रूपधरि, कहौ कुरंगहु रागु। तुलसी जो मृगमन मुरै, परै प्रेमपट दागु ॥ ३१४ ॥ तुलसी मन निज द्युति फुनहि, व्याधहि देउ दिखाय। बिछुरत होइ न आंधरो, ताते प्रेम न जाय ॥ ३१५ ॥ जरत तुहिन लखि बनज बन, रबिदै पीठि पराउ। उदय बिकस अथवत सकुच, मिटै न

सहज सुभाउ ॥ ३१६ ॥ देउ आपने हाथ जल, मीनहि माहुर घोरि । तुलसी जिय जो बारि बिनु, तौ तुँ देहि कबि खोरि ॥ ३१७ ॥ मकर उरग दादुर कमठ, जलजीवन जलगेह । तुलसी एकै मीन के, है सांचि लो सनेह ॥ ३१८ ॥ तुलसी मिटै न मरि मिटेहु, सांचो सहज सनेहु । मेरि सिखावन मूरहूं, गरजत पलुहत मेहु ॥ ३१६ ॥ सुलभ प्रीति प्रीतम सबै, कहत कहत सबकोइ । तुलसी मीन पुनीतते, त्रिभुवन बड़ो न कोइ ॥ ३२० ॥ तुलसी जप तप नेम ब्रत, सब सबही ते होइ । लहै बड़ाई देवता, इष्टदेव जब होइ ॥ ३२१ ॥ कुदिन हितू सोहित सुदिन, हित अनहित किन होइ । शशि छबि हर रवि सदन तउ, मित्र कहत सब कोइ ॥ ३२२ ॥ के लघु के बड़े मीत भल, सम सनेह दुख सोइ । तुलसी ज्यों घृत मधु सरिस, मिलै महाबिष होइ ॥ ३२३ ॥ मान्य मीत सों सुख चहै, सों न छुये छल छांह । शशि त्रिशंकु केकयी

गति, लखि तुलसी मनमांह ॥ ३२४ ॥ कही कठिन कृत कोमलहु, हित हठि होइ सहाइ । पलक पानिपर ओड़ि अति, समुझि कुधाइ सुधाइ ॥ ३२५ ॥ तुलसी बैर सनेह दोउ, रहित बिलोचन चारि ॥ सुरहि सेवये आदरहिं, निन्दहिं सुरसरि बारि ॥ ३२६ ॥ रुचै मांगनेहि मांगिबो, तुलसी दानहि दानु । आलस अनखन आचरज, प्रेम पिहानी जानु ॥ ३२७ ॥ अमिय गारि गारेउ गरल, नारि करिय करतार । प्रेम बैर की जननि युग, जानहि बध न गँवार ॥ ३२८ ॥ सदा न जे सुमिरत रहहिं, मिलि न कहैं प्रिय बैन । तापै तिन्ह के जाय घर, जिनके हिये न नैन॥ ३२६ ॥ हित पुनीत सब स्वारथहि, अरि अशुद्ध बिनु जाड़ । निज मुख मानिक सम दशन, भूमि परे ते हाड़ ॥३३० ॥ माखी काक उलूक बक, दादुर से भये लोग । भले ते शुक पिक मोर से, कोउ न प्रेमपथ योग ॥ ३३१ ॥ हृदय कपट बरवेष धर, बचन कहै गढ़ि छोलि । अबके लोग

मयूर ज्यों, क्यों मिलिये मन खोलि ॥ ३३२ ॥ चरण चोंच लोचनरँगे, चलै मराली चाल। क्षीर नीर बिवरण सबै, बक उघरत तेहि काल ॥ ३३३ ॥ मिलो जो सरलहि सरल है, कुटिलन सहज बिहाइ। शीश हेतु ज्यों बक्रगति, व्याल न बिले समाइ ॥ ३३४ ॥ कुशासन सखहि न देव दुख, सुयहु न मांगव नीच। तुलसी सज्जन की रहनि, पावक पानी बीच ॥ ३३५ ॥ सङ्ग सरल कुटिलहि भये, हरिहर करहि निबाहु। ग्रह गनती गति चतुर बिधि, कियो उदरबिनु राहु ॥ ३३६ ॥ नीच निचाई नहिं तजै, सज्जनहूं के सङ्ग। तुलसी चन्दन बिटप बसि, बिन विष भये न भुअंग ॥ ३३७ ॥ भलो भलाई पै लहै, लहै निचाई नीच। सुधा सराही अमरता, गरल सराही मीच ॥ ३३८ ॥ मिथ्या माहुर सज्जनहि, खलहि गरल सम सांच। तुलसी छुवत पराय ज्यों, पारद पावक आंच ॥ ३३९ ॥ सत संगति अपबर्गकर, कामी भवकर पन्थ। कहहिं साधु

कवि कोविद, श्रुति पुराण सबग्रन्थ ॥ ३४० ॥ सुकृत
न सुकृती परिहरै, कपट न कपटी नीच । भरत सिखा·
वन सो दियो, गीधराज मारीच ॥ ३४१ ॥ सुतरु सुजन
बन ऊखसम, खल टङ्किका रुखान । परहित अनहित
लागि सब, सांसत हसत समान ॥ ३४२ ॥ पियहिं
सुमन रस अलि विटप, काटि कोलि फल खात । तुलसी
तरु जीवै युगल, सुमति कुमति की बात ॥ ३४३ ॥
अवसर कौड़ी जो चुकै, बहुरि दिये का लाख । दुइज
न चन्दा देखिये, उदय कहा भरि पाख ॥ ३४४ ॥ ज्ञान
अनभलो को सबहि, भलो भलेहू काउ । सींग सूंड़
रद मूल नख, करत जीव जड़ घाउ ॥ ३४५ ॥ तुलसी
जगजीवन अहित, कतहुं कोउ हित जानि । शोषक
भानु कृशानु महि, पवन एक घन दानि ॥ ३४६ ॥
सुनिय सुधा देखी गरल, सब करतूति कराल । जहँ
तहँ काक उलूक बक, मानस सुकृत मराल ॥ ३४७ ॥
जलचर थलचर गगनचर, देव दनुज नर नाग । उत्तम

मध्यम अधम खल, दशगुण बढ़त बिहाग ॥ ३४८ ॥ बलिमिस देखे देवता, करमिस मानवदेव । मुये मार अब चाहरत, स्वारथ साधन सेव ॥ ३४९ ॥ सुजन कहत भल पोचपथ, पायन परखे भेद । कर्मनाश सुरसरित मिस, बिधिनिषेध बद वेद ॥ ३५० ॥ मणि भाजन मधुपारई, पूरण अमी निहारि । का छांड़िय का संग्रही, कहहु बिबेक बिचारि ॥ ३५१ ॥ उत्तम मध्यम नीच गति, पाहन सिकता पानि । प्रीति परीक्षा तिहुँन को, बैर व्यतिक्रम जानि ॥३५२॥ पुण्य प्रीति पति प्रापतिउ, परमारथ पथ पांच । लखहिं सुजन परिहरहि खल, सुनहु सिखावन सांच ॥ ३५३ ॥ नीच निरादर ऊंच के, आदर सुखद बिशाल । कदली बदली बिटपगति, पेखहु वंश रसाल ॥ ३५४ ॥ तुलसी अपनो आचरण, भलो न लागत कासु । तेहि न बसात जो खातनित, लहसुनहू की बासु ॥ ३५५ ॥ बुधसों बिबेकी बिमल मति, जेहिके रोष न राग । सुहृद सराहत साधु

जेहि, तुलसी ताको भाग ॥ ३५६ ॥ आपु आपु कहँ सब भलो, आपन कहँ कोइ कोइ ॥ तुलसी सब कहँ जो भलो, सुजन सराहिय सोइ ॥ ३५७ ॥ तुलसी भलो सुसङ्गते, पोच कुसंगति होइ ॥ नाउ किन्नरी तीर असि, लोह बिलोकहु लोइ ॥ ३५८ ॥ गुण संगति गुरु होइ सो, लघु संगति लघु नाम । चारि पदारथ में गनै, नरक द्वारहू काम ॥ ३५९ ॥ तुलसी गुरु लघुता लहत, लघु संगति परिणाम । देवी देव पुकारियत, नीच नारि नर नाम ॥ ३६० ॥ तुलसी किये कुसङ्ग थिति, होइ दाहिनी बाम । कहि सुनि सकुचिय सूम खल, गत हर शंकर नाम ॥ ३६१ ॥ बसि कुसङ्ग चह सुजनता, ताकी आस निरास । तीरथहू को नाम भो, गया मगह के पास ॥ ३६२ ॥ रामकृपा तुलसी सुलभ, गङ्ग सुसङ्ग समान । योजन परै जो जन मिलै, कीजै आपु समान ॥ ३६३ ॥ ग्रह भेषज जल पवन पट, पाइ कुयोग सुयोग । होइ कुबस्तु सुबस्तु जग, लखहिं सुलक्षण लोग ॥

३६४ ॥ जन्म योग में जानियत, जग बिचित्र गति देखि । तुलसी आखर अङ्करस, रँगे बिभेद बिशेखि ॥ ३६५ ॥ आखर जोरि बिचार करु, सुमति अङ्क लिखि लेखु । योग कुयोग सुयोगमय, जग गति समुझि बिशेखु ॥ ३६६ ॥ करु बिचार चलु सुपथ भल, आदि मध्य परिणाम । उलटे जपे जे रामरा, सूधे राजा राम ॥ ३६७ ॥ होइ भलेके अनभलो, होय दानिके सूम । होइ कपूत सपूत के, ज्यों पावकमें धूम ॥ ३६८ ॥ जड़ चेतन गुण दोषमय, बिश्व कीन्ह करतार । सन्त हंस गुण गहहिं पय, परिहरि बारि बिकार ॥ ३६९ ॥

सो०—पाट कीटते होइ, ताते पाटम्बर रुचिर । कृमि पालै सब कोइ, परम अपावन प्राणसम ॥ ३७० ॥

दो०—जो जो जेहि जेहि रस मगन, तहँ सो मुद मन मानि । रस गुण दोष बिचारिबो, रसिक रीति पहिंचानि ॥ ३७१ ॥ सम प्रकाश तम पाख दुहुँ, नाम भेद बिधि कीन्ह । शशिपोषक शोषक समुझि, जग

यश अपयश दीन्ह ॥ ३७२ ॥ लोक वेदहूलौं दगा, नाम भलेको पोच । धर्मराज यमराज पवि, कहत सकोच न शोच ॥ ३७३ ॥ बिरुचि परिख यह सुजन जन, राखि परखियहि मन्द । बड़वानल शोषत उदधि, हर्ष बढ़ावत चन्द ॥ ३७४ ॥ प्रभु सन्मुखभये नीचनर, निपटभये बिकराल । रविरुख लखि दर्पण फटिक, उगिलत ज्वालाजाल ॥ ३७५ ॥ प्रभु समीपगत सुजन जन, होत सुखद सो बिचारि । लवणजलधि जीवन जलद, बर्षत सुधा सवारि ॥ ३७६ ॥ नीच निरावहिं निरस तरु, तुलसी सींचहिं ऊख । पोषत पयद समान सब, बिष पियूषके रूख ॥ ३७७ ॥ बरषि बिश्व हर्षित करत, हरत ताप औ प्यास । तुलसी दोष न जलद को, जो जल जरै जवास ॥ ३७८ ॥ अमर दानि याचक मरहिं, मरि मरि फिरि फिरि लेहिं । तुलसी याचक पातकी, दातहि दूषण देहिं ॥ ३७९ ॥ लखि गयन्द लै चलहिं भजि, श्वान सुखानो हाड़ । जगगुण मोल

अहारबल, महिमा जानि किराड़ ॥ ३८० ॥ कै निदरहु कै आदरहु, सिंहहि श्वान सियार। हरष बिषाद न केसरिहि, कुञ्जर गजहि निहार ॥ ३८१ ॥ ठाढ़ो द्वार न देसकै, तुलसी जे नर नीच। निन्दहिं बलि हरिचन्द को, का कियो करण दधीच ॥ ३८२ ॥ ईश शीश बिलसत बिमल, तुलसी तरल तरङ्ग। श्वान सरावक के कहैं, लघुता लहै न गङ्ग ॥ ३८३ ॥ तुलसी देवला देवकी, लागे लाख करोरि। काक अभागे हगिभस्यो, महिमा भई कि थोरि ॥ ३८४ ॥ निजगुण घटत न नाग नग, परखि परोहत कोल। तुलसी प्रभु भूषण किये, गुञ्जा बढ़ै न मोल ॥ ३८५ ॥ राकापति षोड़श उवहिं, तारागण समुदाइ। सकल गिरिन्ह दव लाइये, बिनु रवि राति न जाइ ॥ ३८६ ॥ भलो कहै बिनु जानिहूं, बिनुजाने अपवाद। ते नर दादुर जानि जिय, करिय न हर्ष बिषाद ॥ ३८७ ॥ परसुख सम्पति देखि सुख, जरहिं जे जड़ बिनु आगि। तुलसी तिनके भागिते, चलै भलाई

भागि ॥३८८॥ तुलसी जे कीरति चहहिं, परकी कीरति खोइ। तिनकेमुँह मसि लागिहै, मिटिहि न मरि हैं धोइ॥ ३८९॥ तन गुण धन महिमा धरम, तेहि बिनु जो अभिमान। तुलसी जियत बिडम्बना, परिणामहि गतिजान॥ ३९०॥ सासु श्वशुर गुरु मातुपितु, प्रभु भयो चहै सबकोइ। होनो दूजी ओर को, सुजन सराहिय सोइ॥ ३९१॥ शठ सहि सांसति पति लहत, सुजन कलेश न काय। गढ़ि गुढ़ि पाहन पूजिये, गराडकि शिला सुभाय॥ ३९२॥ बड़े बिबुध दरबारते, भूमिभूप दरबार। जापक पूजक पेखियत, सहत निरादर भार॥ ३९३॥ बिनु प्रपञ्च छल भीख भलि, लहिय न किये कलेश। बामन बलि सों छल कियो, दियो उचित उपदेश॥ ३९४॥ भलो भले से छल किये, जन्म कनौड़ो होइ। श्रीपति शिर तुलसी लसति, बलि बामन गति सोइ॥ ३९५॥ बिबुध काज बामन बलिहि, छलो भलो जिय जानि। प्रभुता तजि बश भे तदपि, मन की गई न ग्लानि॥ ३९६॥

सरल बक्रगति पञ्चग्रह, चपरि न चितवत काहु।
तुलसी सूधे सूर शशि, समय बिडम्बितराहु ॥ ३९७ ॥
खल उपकार बिकार फल, तुलसी जान जहान। मेडुक
मरकट बनिक बक, कथा सत्य उपखान ॥ ३९८ ॥
तुलसी खल बाणी मधुर, सुनि समुझिय हिय हेरि।
रामराज बाधक भई, मूढ़ मन्थरा चेरि ॥ ३९९ ॥ जोंक
सूधि मन कुटिल गति, खल बिपरीत बिचारु। अन-
हित सों नित सोखसो, सो हित शोषनहारु ॥ ४०० ॥
नीच गुणी ज्यों जानिबो, सुनि लखि तुलसीदास।
ढीलि दियो गिरिपरत महि, खैंचत चढ़त अकास ॥ ४०१ ॥
भरदरबरषत कोस शत, बचैं जे बूंद बराइ। तुलसी
त्यों खल बचन शर, हिये गये न पराइ ॥ ४०२ ॥
पेरत कोल्हू मेलि तिल, तिली सनेही जानि। देखि
प्रीति की रीति यह, अब देखी बरसानि ॥ ४०३ ॥
सहबासी काचो गिलहि, पुरजन पाक प्रवीन। काल-
क्षेप कहि मिल करहि, तुलसी खग मृग मीन ॥ ४०४ ॥

जासु भरोसे सोइये, राखि गोद पर शीश । तुलसी तासु कुचाल ते, रखवारो जगदीश ॥ ४०५ ॥ मारि खोज लहि सोह करि, करि मत लाज न त्रास । मुये नीच ते मीच बिनु, जे इनके विश्वास ॥ ४०६ ॥ पर द्रोही परदाररत, परधन पर अपवाद । ते नर पामर पापमय, देह धरे मनुजाद ॥ ४०७ ॥ बचन बेष क्यों जानिये, मन मलीन नर नारि । शूर्पणखा मृग पूतना, दश मुख प्रमुख बिचारि ॥ ४०८ ॥ हँसनि मिलनि बोलनि मधुर, कटु करतब मनमाँह । छुवत जो सकुचै सुमति सो, तुलसी तिनकी छाँह ॥ ४०९ ॥ कपटसार सूची सहस, बांधि बचन परवास । किय दुराउ चहैं चातुरी, सो शठ तुलसीदास ॥ ४१० ॥ बचन बिचार अचार तन, मन करतब छलछूटि । तुलसी क्यों सुख पाइये, अन्तर्यामिहि धूति ॥ ४११ ॥ शारदूलको स्वांग कर, कूकुर को करतूति । तुलसी तापर चाहिये, कीरति बिजय बिभूति ॥ ४१२ ॥ बड़े पाप बाढ़े किये,

छोटे किये लजात। तुलसी तापर सुख चहत, बिधिसों बहुत रिसात ॥ ४१३ ॥ देश काल करता करम, बचन बिचार बिहीन। ते सुरतरुतर दारिदी, सुरसरितीर मलीन ॥ ४१४ ॥ साहसही सिख कोप बस, किये कठिन परिपाक। शठ सङ्कट भाजन भये, हठि कुजाति कपि पाक ॥ ४१५ ॥ राजकरत बिनु काजही, करैं कुचालि कुसाज। तुलसी ते दशकन्ध ज्यों, जैहैं सहित समाज ॥ ४१६ ॥ राजकरत बिनु काजही, ठठहिं जे कूर कुठाट। तुलसी तेकर राज ज्यों, जैहै बारहबाट ॥ ४१७ ॥ सभा सुयोधन की शकुनि, सुमति सराहन योग। द्रोण बिदुर भीषम हरिहि, कहैं प्रपञ्ची लोग ॥ ४१८ ॥ पाण्डुसुवन की सदसते, नीको रिपुहित जानि। हरिहरसम सब मानियत, मोहजानकी बानि ॥ ४१९ ॥ हितपर बढ़ै बिरोध जब, अनहित पर अनुराग। रामबिमुख बिधिबामगति, सगुण अघाय अभाग ॥ ४२० ॥ सहज सुहृद गुरुस्वामिसिख, जो न करै शिरमानि। सो

पछताय अघाय उर, अवशि होइ हितहानि ॥ ४२१ ॥ मरु हाये नट भाट के, चपरि चढ़े संग्राम । कै वे भाजें आय हैं, कै बांधे परिणाम ॥ ४२२ ॥ लोकरीति फूटी सहै, आंजी सहै न कोइ । तुलसी जो आंजीसहै, सो आंधरो न होइ ॥ ४२३ ॥ माथे भल आड़ेहु भलो, भलो न घालेउ घाउ । तुलसी सबके शीश पर, रखवारो रघुराउ ॥ ४२४ ॥ सुमति बिचारहिं परिहरहिं, दल सुमनहुं संग्राम । सकुल गये तनु बिनु भये, साखी यादव काम ॥ ४२५ ॥ कलह न जानब छोट करि, कलह कठिन परिणाम । लगति अगिन लघु नीच गृह, जरत धनिक धनधाम ॥ ४२६ ॥ रोष क्षमा के दोष गुण, सुनि मनु मानहि सीख । अबिचल श्रीपति हरि भये, भूसुर लहै न भीख ॥ ४२७ ॥ कौरव पाण्डव जानिये, क्रोध क्षमा के सीम । पांचहि मारि न सहि सके, सबौं सँहारे भीम ॥ ४२८ ॥ बोल न मोटे मारिये, मोटी रोटी मारु । जीति सहज सम हारिबो, जीते हारि निहारु ॥ ४२९ ॥

जो परि पाय मनाइये, तासों रूठि बिचारि। तुलसी तहां न जीतिये, जहँ जीते है हारि ॥ ४३० ॥ जूझे ते भल बूझिबो, भली जीति ते हारि। डहँके ते डहँकाइबो, भलो जो करिय बिचारि ॥ ४३१ ॥ जा रिपु सों हारेहु हँसी, जिते पाय परितापु। तासों रारि विचारिये, समय सम्हारे आपु ॥ ४३२ ॥ जो मधु मरै न मारिये, माहुर देइ जो काउ। जग जीते हारे परसु, हारि जिते रघुराउ ॥ ४३३ ॥ बैरमूलहर हितवचन, प्रेम मूल उपकार। दोहा सुभ सन्दोह सी, तुलसी किये बिचार ॥ ४३४ ॥ रोष न रसना खोलिये, बरु खोलिय तरवारि। सुनत मधुर परिणाम हित, बोलिय बचन विचारि ॥ ४३५ ॥ मधुर बचन कटु बोलिबो, बिनु श्रम भाग अभाग। कुहू कुहू कलकण्ठरव, काकाकररत काग ॥ ४३६ ॥ पेट न फूलत बिनु कहे, कहत न लागे ढेरु। सुमति बिचारे बोलिये, समुझि कुफेरु सुफेरु ॥ ४३७ ॥ छियो न तरुणि कटाक्षशर, करेउ न कठिन सनेहु।

तुलसी तिनकी देह की, जगतकवच कर लेहु ॥४३८॥ शूर समर करणी करहिं, कहि न जनावहिं आपु । विद्यमान रणपाय रिपु, कायर कथहिं प्रलापु ॥४३६॥ बचन कहै अभिमान के, पारथ पेखतु सेतु । प्रभु तिय लूटत नीच नर, जय न मीचु तेहि हेतु ॥ ४४० ॥ राम लषण बिजयी भये, मनहु गरीबनिवाज । मुखर बालि रावण गये, घरही सहित समाज ॥ ४४१ ॥ खग मृग मीत पुनीत किय, बनहु राम नयपाल । कुमति बालि दशकण्ठनर, सुहृद बन्धु किय काल ॥ ४४२ ॥ लखै अघाने भूख ज्यों, लखैं जीति में हारि । तुलसी सुमति सराहिये, मग पग धरै बिचारि ॥ ४४३ ॥ लाभ समय को पालिबो, हानि समय की चूक । सदा बिचारहिं चारु मति, सुदिन कुदिन दिन दूक ॥४४४॥ सिन्धुतरण कपि गिरिहरण, काज सांइ हित दोउ । तुलसी समयाहि सम बड़ो, बूझत कहँ कोउ कोउ ॥ ४४५ ॥ तुलसी मीठो अमी ते, मांगी मिलै जो मीचु । सुधा

सुधाकर समय बिनु, कालकूट ते नीचु ॥ ४४६ ॥ तुलसी असमयको सखा, धीरज धर्म बिबेक । साहित साहस सत्यब्रत, राम भरोसो एक ॥ ४४७ ॥ समरथ कोउ न रामसों, सीयहरण अपराधु । समयहि साधे काज सब, समय सराहहि साधु ॥ ४४८ ॥ तुलसी तीरहु के चले, समय पाइबो थाह । धाइ न जाइ थहाइबो, सर सरिता अवगाह ॥ ४४६ ॥ तुलसी जसि भवितव्यता, तैसी मिलै सहाय । आपु न आवै ताहि पै, कि ताहि तहां लैजाय ॥ ४५० ॥ कै बूझिबो कै बूझिबो, दानकि काय कलेश । चारि चारु परलोकपथ, यथायोग उपदेश॥ ४५ १॥ पात पात को सींचिबो, न करु सर्गतरु हेत। कटिल कटुक फल फरैगो, तुलसी करत अयेत॥ ४५ २॥ गाढ़ि बँधते परतीति बढ़ि, जेहि सब को सब काज । कहब थोर समुझब बहुत, गाड़े बढ़त अनाज ॥ ४५ ३ ॥ अपनो सपने कर थपै, तिय पूजहिं निज भीति । फलै सकल मनकामना, तुलसी प्रीति प्रतीति ॥ ४५ ४ ॥

बरषत करषत आपुजल, हरषत अर्बनिभानु । तुलसी चाहत साधु सुर, सब सनेह सनमानु ॥ ४५५ ॥ श्रुति गुणकर गुनपूजुजग, मृग यदि खेती खाउ । देहि लेहि धन धरणिधरु, गयहु न जाइहि काउ ॥ ४५६ ॥ ऊगुनपूगुन बिरजक्रम, आभ अभू गुणसाथ । हरो धरो गाड़ो दियो, धन फिरि चढ़े न हाथ ॥ ४५७ ॥ रवि हर दिश गुण रस नयन, मुनि प्रथमादिक बार । तिथि सब काज नशावनी, होइ कुयोग बिचार ॥ ४५८ ॥ शशि शर नव दुइ छ दश गुण, मुनि फल बसु हर भानु । मेषादिक क्रमते गनहि, घातचन्द जिय जानु ॥ ४५९ ॥ नकुल सुदरशन दरशनी, क्षेमकरी चष चाष । दश दिशि देखत सगुन शुभ, पूजहि मन अभिलाष ॥ ४६० ॥ सुधा साधुपुर तरुसुमन, सुफल सुहावनि बात । तुलसी सीतापति भगति, सगुन सुमङ्गल सात ॥ ४६१ ॥ भरत शत्रुसूदन लषण, सहित सुमिरि रघुनाथ । करहु काज शुभ सांच सब, मिलहि

सुमङ्गल साथ ॥ ४६२ ॥ राम लषण कौशिक सहित, सुमिरहु करहु पयान । लक्ष लाभलै जगत यश, मङ्गल सगुन प्रमान ॥ ४६३ ॥ अतुलित महिमा वेद की, तुलसी किये बिचार । जो निन्दत निन्दित भयो, बिदित बुद्ध अवतार ॥ ४६४ ॥ बुधि किसान सर वेद निज, मते खेत सब सींच । तुलसी कृषि लखि जानिबो, उत्तम मध्यम नीच ॥ ४६५ ॥ सहि कुबोल सासति सकल, अगइ अनट अपमान । तुलसी धर्म न परिहरिय, कहि करि गये सुजान ॥ ४६६ ॥ अनहित भय परहित किये, पर अनहित हितहानि । तुलसी चारु बिचारु भल, करिय काज सुनि जानि ॥ ४६७ ॥ पुरुषारथ पूरब करम, परमेश्वर परधान । तुलसी पैरत सरित ज्यों, सबहि काज अनुमान ॥ ४६८ ॥ चलहु नीति मग राम पग, नेह निबाहन नीक । तुलसी पहिरिय सो बसन, जो न पखारे फीक ॥ ४६९ ॥ दोहा चारु बिचारु चलु, परिहरि बादबिबाद । सुकृत

सींव स्वारथ अवधि, परमारथ मर्याद ॥ ४७० ॥ तुलसी समरथ सुमति जो, सुकृती साधु सयान । जो बिचारि व्यवहरिय जग, खर्च लाभ अनुमान ॥ ४७१ ॥ जाइ योग जग नेम बिनु, तुलसी के हित राखि । बिनु पराध भृगुपति नहुष, बेनु बकासुर साखि ॥ ४७२ ॥ बड़ि प्रतीति गठिबन्धते, बड़ो योग ते क्षेम । बड़ो सुसेवक सांइते, बड़ो नेमते प्रेम ॥ ४७३ ॥ शिष्य सखा सेवक सचिव, सुतिय सिखावन सांच । सुनिसमभहु पुनि परिहरहु, परम निरञ्जन पांच ॥ ४७४ ॥ नारि नगर भोजन सचिव, सेवक सखा अगार । सरस परिहरे रङ्गरस, निरस बिषाद बिकार ॥ ४७५ ॥ टूटहिं निज रुचि काज करि, रूठहिं काज बिगारि । तीय तनय सेवक सखा, मनके कण्टक चारि ॥ ४७६ ॥ दीरघरोगी दारिदी, कटु बच लोलुप लोग । तुलसी प्राणसमान ते, होइँ निरादर योग ॥ ४७७ ॥ पाही खेती लगनबढ़, ऋण कुब्याज मग खेत । बैर बढ़ै सो

आपने, किये पांच दुखहेत ॥ ४७८ ॥ घायलगै लोहा ललकि, खींच लेइ नइ नीचु। समरथ पापी सों बयर, जानि बिसाही मीचु ॥ ४७९ ॥ शोत्रिय गृही जो मोहबश, करै कर्मपथ त्याग। शोत्रिय यती प्रपञ्चरुचि, बिगत बिबेक बिराग ॥ ४८० ॥ तुलसी स्वारथ सा- मुही, परमारथ तन पीठ। अन्ध कहे दुखपाइहै, डिठि- आरो केहि डीठ ॥ ४८१ ॥ बिनु आंखिन की पा- नहीं, पहिंचानत लखि पाइ। चारिनयनके नारिनर, सूझत मीच न माइ ॥ ४८२ ॥ जुपै मूढ़ उपदेशको, हो तो योग जहान। क्यों न सुयोधन बोधकै, आये श्याम सुजान ॥ ४८३ ॥ सोरठा ॥ फूलै फरै न बेत, यदपि सुधा बरषहिं जलद। मूरख हृदय न चेत, जो गुरु मिलैं बि- रञ्चिसम ॥ ४८४ ॥ दोहा ॥ रीझ आपनी बूझपर, खीझ बिचारि बिहीन। ते उपदेश न मानहीं, मोह महोदधिमीन ॥ ४८५ ॥ मन समुझै अन शोचनो, अवशि समुझिआहि आपु। तुलसी आपु न समुझिये,

पल पल परि परितापु ॥ ४८६ ॥ कूप खनत मन्दिर जरत, आये धारि बबूर । बवहिं नवहिं निज काज शिर, कुमति शिरोमणि कूर ॥ ४८७ ॥ निडर ईशते बीसकै, बीसबाहु सो होइ । गयो गयो कहिसुमति सब, भयो कुमति कह कोइ ॥ ४८८ ॥ जो सुनि समुझि अनीतिरत, जागतरहैं जुसोइ । उपदेशिबो जगाइबो, तुलसी उचित न होइ ॥ ४८९ ॥ बहु सुख बहुरुचि बचनबहु, बहु अचार व्यवहार । इनको भलो मनाइबो, यह अज्ञान अपार ॥ ४९० ॥ लोगनि लोभ मनाइबो, भलो होन की आस । करत गगनको आयऊ, सो शठ तुलसीदास ॥ ४९१ ॥ अपयशयोग कि जानकी, मणिचोरी कब कान्ह । तुलसी लोग रिझाइबो, करषि कातिबो नान्ह ॥ ४९२ ॥ तुलसी जुपै गुमान को, होतो कछू उपाउ । तौ कि जानकिहि जानि जिय, परिहरते रघुराउ ॥ ९९३ ॥ मांगि मधुकरी खात ते, सोवत गोड़पसारि । पाय प्रतिष्ठा बाढ़िपरी, ताते बाढ़ी रारि ॥ ४९४ ॥ तुलसी

भेड़ी की धसनि, जड़ जनता सनमान। उपजतही अभिमान भो, खोवत मूढ़ अगान ॥ ४६५ ॥ लही आंखि कब आंधरे, बांझ पूत कब ल्याय। कब कौड़ी काया लही, जग बहराइच जाय ॥ ४६६ ॥ तुलसी निरभय होत नर, सुनियत सुरपुर जाइ। सो गति देखियत अछत तन, सुख सम्पति गति पाइ ॥ ४६७ ॥ तुलसी तोरत तीर तरु, बकहित हंस बिडारि। बिगत नलिन अलि मलिन जल, सुरसरिहूँ बढ़ियारि ॥४६८॥ अधिकारी सब औसरा, भलेउ जानिबे मन्द। सुधा सदन बसुबारहौं, चउथिउ चउथो चन्द ॥ ४६६ ॥ त्रिविधि एक बिधि प्रभु अनुग, अवसर कराहिं कुठाट। सूधो टेढ़ो सम बिषम, सब महँ बारहबाट ॥ ५०० ॥ प्रभुते प्रभुगन दुखद लखि, प्रजहिं सँभारै राउ। करते होत कृपाण को, कठिन घोर घन घाउ ॥५०१॥ ब्यालहु ते बिकराल बड़, ब्यालफेन जिय जानु। उहके खाये मरत है, उह खाये बिनु प्रान ॥ ५०२ ॥ कारण

से कारज कठिन, होइ दोष नहिं मोर। कुलिश अ-स्थिते उपलते, लोह कराल कठोर ॥ ५०३ ॥ काल बिलोकत ईश रुख, भानु काल अनुहारि। रविहि राउ राजहिं प्रजा, बुध ब्यवहरहि विचारि ॥ ५०४ ॥ यथा कमल पावन पवन, पाइ कुसङ्ग सुसङ्ग। कहि अकु-वास सुवास तिमि, काल महीश प्रसङ्ग ॥ ५०५ ॥ भलेहु चलतपथ योगभय, नृपतियोग नय नेम। सुतिय सुभू-पति भाषियत, लोहपवारित हेम ॥ ५०६ ॥ माली भानु किसानसम, नीति निपुण नरपाल। प्रजा भाग बश होहिंगे, कबहुँ २ कलिकाल ॥ ५०७ ॥ बरषत हरषत लोग सब, करषत लखै न कोइ। तुलसी प्रजा सुभागते, भूपभानु सो होइ ॥ ५०८ ॥ सुधा सुनाज कुनाज फल, आम असनसम जानि। सुप्रभु प्रजा हित लेहि कर, सामादिक अनुमानि ॥ ५०९ ॥ पाके पकये विटप दल, उत्तम मध्यम नीच। फलतरु लहैं नरेश त्यों, करि बिचार मन बीच ॥ ५१० ॥ रीझि खीझि गुरु देत सिख, सखा सुसाहब साध। तोरि खाय फल होइ भल, तरु काटे अपराध ॥ ५११ ॥ धरणिधेनु

चारित प्रजा, तासु बछ्ये नहाइ । हाथ कछू नहिं लागि है, किये गोडकी गाइ ॥ ५१२ ॥ चढ़ै बहुरै चङ्ग ज्यों, ज्ञान ज्यों शोक समाज । कर्म धर्म सुख सम्पदा, ज्यों जानिबे कुराज ॥ ५१३ ॥ कराटक करिकरि परत गिरि, शाखासहस खजूरि । मरहिं कुनृपकरि करि कुनृप, सो कुचाल भवभूरि ॥ ५१४ ॥ काल तोपची तुपक महि, दारू अनय कराल । पाप पलीता कठिन गुरु, गोला पुहुमीपाल ॥ ५१५ ॥ भूमि रुचिर रावण सभा, अङ्गदपद महिपाल । धरम रावणहि सीय बल, अचल होत शुभकाल ॥ ५१६ ॥ प्रीति रामपद नीति-रत, धर्म प्रतीति सुभाइ । प्रभुहि न प्रभुता परिहरहि, कबहुँ बचन मन काइ ॥ ५१७ ॥ करके कर मन के मनहि, बचन बचन गुण जानि । भूपहि भूलि न परिहरै, बिजय बिभूति सयानि ॥ ५१८ ॥ गोली बाण सुमन्त्र शर, समुझि उलटि मन देखु । उत्तम मध्यम नीच प्रभु, बचन बिचारि बिशेखु ॥ ५१९ ॥ शत्रु सयानो सलिल ज्यों, राखि शीश रिपु नाव । बूड़त लखि पग डगत लखि, चपरि चहूंदिशि धाव ॥ ५२० ॥ रैयत

राजसमाज घर, तन धन धर्म सुभाहु। शान्त सुसचिवन सौंपि सुख, बिलसहिं नित नरनाहु ॥ ५२१ ॥ मुखिया मुखसों चाहिये, खान पान को एक। पालै पोषै सकल अँग, तुलसी सहित बिबेक ॥ ५२२ ॥ सेवक कर पद नयन से, मुख से साहब होय। तुलसी प्रीति कि रीति सुनि, सुकवि सराहहिं सोय ॥ ५२३ ॥ मन्त्री गुरु अरु बैद्य जो, प्रिय बोलहिं भय आश। राज धर्म तन तीन कर, होइ बेगही नाश ॥ ५२४ ॥ रसना मन्त्री दशन जन, तोप पोष निजकाज। प्रभु कर सेन पदादिका, बालक राजसमाज ॥ ५२५ ॥ लकड़ी डौआ करछुली, सरसुकाज अनुहारि। सो प्रभु संग्रह परिहरिहि, सेवक सखा बिचारि ॥ ५२६ ॥ प्रभु समीप छोटे बड़े, निबल होत बलवान। तुलसी प्रकट बिलोकिये, कर अँगुली अनुमान ॥ ५२७ ॥ साहब ते सेवक बड़ो, जो निज धर्मसुजान। राम बांधि उतरे उदधि, नाँघिगयो हनुमान ॥ ५२८ ॥ तुलसी भल बरतरु बढ़त, निज मूलहि अनुकूल। सबहिं भांति सबकहँ सुखद, दलनि फलनि बिनु फूल ॥ ५२९ ॥

सघन सगुण सधरम सगण, सबल समाइ महीप। तुलसी जे अभिमान बिनु, ते त्रिभुवन के दीप॥५३०॥ तुलसी निजकरतूति बिनु, मुक्तजानि जब कोइ। गयो अजामिल लोकहरि, नाम सक्यो नहिं धोइ॥ ५३१॥ बड़ो गहेते होत बड़, ज्यों बावनकर दण्ड। श्रीप्रभुके सँगसो बढ़ो, गयो अखिल ब्रह्मण्ड॥ ५३२॥ तुलसी दान जो देत हैं, जल में हाथ उठाय। प्रतिग्राही जीवै नहीं, दाता नरकै जाय॥ ५३३॥ आन न छोड़ो साथ जब, तादिन हितू न कोइ। तुलसी अम्बुज अम्बु बिनु, तरणि तासु रिपु होइ॥ ५३४॥ उरबी परि कुलहीनहीं, ऊपर कलाप्रधान। तुलसी देखु कुलाय गति, साधन धन पहिंचान॥ ५३५॥ तुलसी सङ्गति पोचकी, सुजन होति भयदानि। यों हरिरूप सुताहिते, कीनो गोहरि आनि॥ ५३६॥ कलिकुचालि शुभमति हरणि, सरलै दण्डै चक्र। तुलसी यह निश्चय भई, बाढ़ो लेत न बक्र॥ ५३७॥ गौ खग शेष गत्रा-रिखग, तीनोंमाह विशेक। तुलसी पीवै फिर चलैं, रहैं फिरैं सँग एक॥ ५३८॥ साधन समय सो सिद्धि

लहि, उभै मूल अनुकूल। तुलसी तीनिउ समय सम, ते महिमङ्गलमूल ॥ ५३६ ॥ मातु पिता गुरु स्वामि सिख, शिरधरि करहिं स्वभाय। लहेउ लाभ तिन जन्मकर, न तरु जन्म जग जाय ॥ ५४० ॥ अनुचित उचित बिचारतजि, जे पालहिं पितु बैन। ते भाजन सुख सुयश के, बसहिं अमरपति ऐन ॥ ५४१ ॥

सो०–सहज अपावनिनारि, पतिसेवतशुभगतिलहै। यश गावत श्रुतिचारि, अजहुतुलसिकाहरिहिंप्रिय ५४२

दो०–शरणागत कहँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि। ते नर पामर पापमय, तिन्हैं बिलोकत हानि ॥ ५४३ ॥ तुलसी तृण जलकूल को, निरधन निपट निकाज। की राखै की सँगचलै, बाँह गहे की लाज ॥ ५४४ ॥ रामायण अनुहरत सिख, जगभयो भारत रीति। तुलसी शठकी को सुनै, कलि कुचालि पर प्रीति ॥ ५४५ ॥ पात पातके सींचबे, बरी बरीके लौन। तुलसी खोटे चतुरपनि, कलि डहके कहु कौन॥ ५४६ ॥ प्रीति सगाई सकल गुण, बणिज उपाय अनेक। कल बल छल कलिमल मलिन, डहकत

एकहिएक ॥ ५४७ ॥ दम्भसहित कलिधर्म सन, छल समेत ब्यवहार । स्वारथ सहित सनेह सब, रुचि अनुहरत अचार ॥ ५४८ ॥ चोर चतुर बटपार भट, प्रभु प्रिड भरुहा भण्ड । सब भक्षक परमारथी, कलिसुपन्थ पाखण्ड ॥ ५४६ ॥ अशुभ बेष भूषण धरें, भक्ष अभक्ष जे खाहिं । ते योगी ते सिद्ध नर, पूजित कलियुग माहिं ॥ ५५० ॥

सो०—जे अपकारी चार, तिन कर गौरव मान तेइ ।
मनबचकर्मलबार, तेवक्ताकलिकालमहँ ॥ ५५१ ॥

दो०— ब्रह्मज्ञान बिनु नारि नर, कहहिं न दूसरि बात । कौड़ी लगि ते मोह बश, करहिं बिप्र गुरु घात ॥ ५५२ ॥ बादहिं शूद्रहु द्विजन सन, हम तुम से कछु घाटि । जानहिं ब्रह्म सो बिप्रबर, आंखि दिखावहिं डाटि ॥ ५५३ ॥ साखी शबदी दोहरा, कहि कहनी उपखान । भगति निरूपहिं भगत कलि, निन्दहिं वेद पुरान ॥ ५५४ ॥ श्रुति सम्मत हरिभक्तपथ, संयुत बिरति बिबेक । तेहि परिहरहिं बिमोहबश, कलपहिं पन्थ अनेक ॥ ५५५ ॥ सकल धर्म विपरीति कलि, कलपित कोटि कुपन्थ । पुण्य पराय बहारबन, दुरे पुराण

शुभग्रन्थ ॥ ५५६ ॥ धातुवाद निरुपाधि बर, सदगुरु लाभ सभीत । देवदरश कलिकाल में, पोथी दूर सभीत ॥ ५५७ ॥ शूरसदन तीरथ पुरन, निपट कुचालि कुसाज । मनहुं मवासे मारि कलि, राजत सहित समाज ॥ ५५८ ॥ गौड़ गँवार नृपाल महि, यमन महा महिपाल । साम न दाम न भेद कलि, केवल दण्ड कराल ॥ ५५९ ॥ फोरहि शिल लोढ़ा सदन, लागे अढुक पहार । कायर कूर कपूत कलि, घर घर सह सडहार ॥ ५६० ॥ प्रकट चारि पथ धर्म के, कलिमहँ एक प्रधान । येन केन बिधि दीन्हहु, दान करैं कल्यान ॥ ५६१ ॥ कलियुग समयुग आन नहिं, जो नर कर बिश्वास । गाइ रामगुणगण बिमल, भवतर बिनहिं प्रयास ॥ ५६२ ॥ श्रवण घटहु पुनि दृग घटहु, घटै सकल बल देह । इते घटे घटि है कहा, जो न घटै हरि नेह ॥ ५६३ ॥ तुलसी पावस के समय, धरी कोकिलन मौन । अब तो दादुर बोलिहैं, हमैं पूछिहैं कौन ॥ ५६४ ॥ कुपथ कुतर्क कुचालि कलि, कपट दम्भ पाखण्ड । दहन रामगुणग्राम जिमि, इंधन अनल

प्रचण्ड ॥ ५६५ ॥ सोरठा ॥ कलि पाखण्ड प्रचार, प्रबल पाप पामर पतित । तुलसी उभै अधार, रामनाम सुरसरि सलिल ॥ ५६६ ॥ दोहा ॥ रामचन्द्र मुख चन्द्रमा, चित चकोर जब होइ । रामकाज सब काम शुभ, समय सुहावन सोइ ॥ ५६७ ॥ बीज रामगुनगण नयन, जल अंकुर पुलकालि । सुकृती सुनत सुखेत बर, बिलसत तुलसी शालि ॥ ५६८ ॥ तुलसी सहित सनेह नित, सुमिरहु सीताराम । सगुण सुमङ्गल शुभ सदा, आदि मध्य परिणाम ॥ ५६९ ॥ पुरुषारथ स्वारथ सकल, परमारथ परिणाम । सुलभ सिद्धि सब साहिबो, सुमिरत सीताराम ॥ ५७० ॥ मणिमय दोहा दीप जहँ, उर घर प्रकट प्रकास । तहँ न मोहमय तम तमी, कलि कज्जली बिलास ॥ ५७१ ॥ का भाषा का संस्कृत, प्रेम चाहिये सांच । काम जो आवै कामरी, का लै करै कुमांच ॥ ५७२ ॥

इति श्रीगोस्वामी श्रीतुलसीदासकृत
दोहावली सम्पूर्णा ॥



निम्नलिखित पुस्तकें रायबहादुर बाबू ज़ालिमसिंह कृत देखने योग्य हैं ॥

ईशावास्य उपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	-)॥
केनोपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	=)
कठवल्ली उपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	।=)
प्रश्नोपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	।-)
मुंडक उपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	।-)
माण्डूक्योपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	-)॥
तैत्तिरीयोपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	॥)
ऐतरेयोपनिषद् भाषाटीका सहित	....	....	≡)
भगवद्गीता भाषाटीका सहित १ भाग		....	१=)
तथा २ भाग	....	....	१)
अष्टावक्रगीता भाषाटीका सहित	....	....	१।)
रामगीता भाषाटीका सहित....	....	....	।॥)
सांख्यकारिकातत्त्वबोधिनी भाषाटीका सहित		....	।=)
सांख्यतत्त्वसुबोधिनी भाषाटीका सहित		....	।)

मिलने का पताः—

रायबहादुर मुंशी प्रयागनारायण भार्गव,
मालिक नवलकिशोर प्रेस—लखनऊ.